सेवन विधि और मात्रा : इसके चूर्ण को अन्य औषधियों के साथ या अकेला व्यवहार किया जाता है। इसके साथ गुड़, चीनी मिलाई जा सकती है। मात्रा 2 से 5 ग्राम प्रतिदिन देना चाहिए। कामोद्दीपन के लिए 5 ग्राम चूर्ण और 5 ग्राम मिश्री मिलाकर दूध के साथ देना चाहिए।

व्यवसायिक दृष्टि से यह आज के दिन दुर्लभ होते जा रहा है। इसकी अच्छी मांग है। इसकी खेती काफी लाभप्रद है। इसकी खेती करने से अन्न के फसल से ज्यादा लाभप्रद है। अतः इसकी खेती लाभदायी है।

9. पारसीक अजवायन (HYOSCYMUS NIGER)

यह अजवायन के गंध की परन्तु अजवायन से भिन्न पौधा हैं। इसका नामकरण ठीक नहीं है। फिर भी यह औषधीय गुण रखने के कारण चिकित्सा जगत में प्रचलित है। अपने लैटिन नाम के अनुरूप भी यह है या नहीं इसमें भी संदेह है। परन्तु व्यवहार में आने के कारण नाम चाहे जो भी है। यह उपयोगी औषधि बन जाती है। इसकी पूर्ण पहचान अभी नहीं है। परन्तु जिस अजवायन की चर्चा मैं कर रहा हूँ उसमें वे सारे गुण है जो पारसीक अजवायन में है। यह कई प्रकार की होती है। परन्तु यह जाति बिहार, बंगाल, मध्य प्रदेश में यत्र–तत्र मिलती है। अतः इसका गुण वर्णन नीचे दिया जा रहा है।

गुण प्रभाव : यह अजवायन थोड़ी विषैली है तथा मदकारक है। इसे गरम औषधियों में गिना गया है। नीन्द में चलना, मन की कमजोरी, पागलपन या पागलन जैसी क्रिया, मनोविश्रांति, स्वप्न अधिक देखना, डरना, चिल्लाना इत्यादि मन के रोगों में इसका व्यवहार अति सफलता पूर्वक होता है। इसके लिए सर्पगन्धा 10 ग्राम खुरासानी अजवायन 10 ग्राम जटामशी 10 ग्राम, वच 10 ग्राम एवं भाँगरा सत्व 40 ग्राम तीनों को कुट कर चूर्ण बनाकर भाँगरा के रस से आधी ग्राम की गोली बना लें। इसे सुबह सायं देवें। मन के लगभग सभी रोगों पर यह अति उत्तम कार्य करता है। सर दर्द तथा स्नायविक आक्षेप जन्य बिमारी भी इससे मिटती है। मात्रा ¼ ग्राम प्रतिदिन चूर्ण बनाकर **व्यवसायिक दृष्टि से** इसका उत्पादन बहुत अनिवार्य है। यह विदेश से आता है। इसकी मांग अन्य औषधि तथा क्षाराभ बनाने वाली कम्पनियाँ करती है। इसको बेच कर अच्छी आमदनी की जा सकती है।

10. धतुरा (DATURA ALBA)

समस्त भारत में मिलने वाले इस पौधा को सभी लोग जानते हैं। शिवजी के ऊपर यह समर्पित होता है। इसके उजले, पीले एवं काले तीन भेद हैं। तीनों के गुण में समानता है। परन्तु तंत्र क्रिया एवं रसायन क्रिया में काला अत्यधिक प्रयुक्त होता है। इसके पीले फुल वाले पौधे कठिनाई से मिलते हैं। चिकित्सा की दृष्टि से सभी धतुरा एक समान गुणकारी होता है। इसके पत्ते जड़ सभी का अलग–अलग व्यवहार होता है।

गुण एवं प्रभाव : इसके पत्ते, बीज एवं जड़ में धतुरीन नामक एक विषैली क्षाराभ पायी जाती है। इसका समस्त अंग–प्रत्यंग मदकारी जहर के रूप में जाना जाता है। बहुत कम ही मात्रा में इसका प्रभाव शरीर पर होने लगता हैं। इसके पत्तों की धुंआ पीने से श्वास रोग में आराम मिलता है। सुखा बीज शोधित करके दम्मा खांसी में प्रयोग करने पर लाभदायी होता है। परन्तु इसकी मात्रा बहुत ही कम दी जाती है। बीज को दुध में उबालकर सुखाकर पुनः गोमुत्र में फुलाकर दो से तीन बार सुखा कर प्रयोग करने की विधि से प्रयोग करना चाहिए। **आमबात** के दर्द में पत्तों में थोड़ा अंडी का तेल लगाकर गर्म कर बांधने से आराम मिलता है। इसके ताजे रस को कंठमाला की गिल्टी पर दर्द दूर करने के लिए लगाया जाता है। कान दर्द, गठिया एवं स्तन के सुजन एवं दर्द में भी इसके रस का प्रयोग लाभदायी होता है। इसके जड़ का व्यवहार पागलपन एवं मीर्गी में होता है। इसके लिए इसके जड़ की एक ग्राम की मात्रा को पीसकर घी एवं दुध के साथ देनी चाहिए। घी की मात्रा कम से कम 5 ग्राम अवश्य होनी चाहिए। शोधित बीज घी में भूंजकर चौथाई रत्ती की मात्रा में घी के साथ खिलाने से नपुंसकता मिटती है। इसको जननेन्द्रियों पर लगाया भी जाता है। धतुरा का मद्यसार में बना सत्व, अफीम के विकल्प के रूप में प्रयुक्त होता है। मलेरिया के लिए इसकी अन्तिम कोमल फुनगी 20 ग्राम, अकवन की

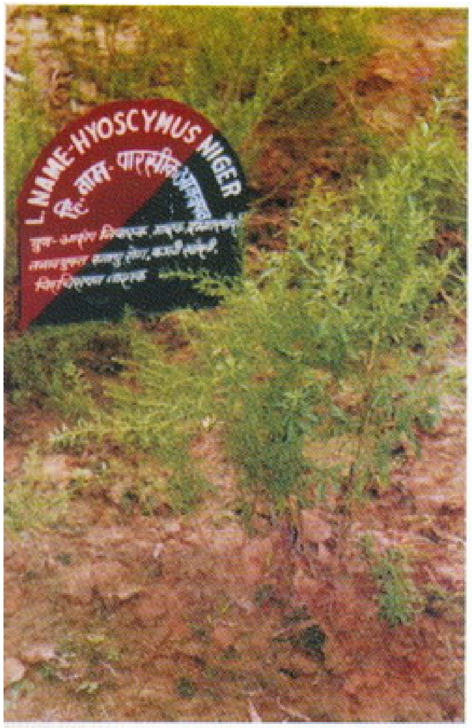

9. पारसिक अजवायन (HYOSCYMUS NIGER)

10. धतुरा (DATURA ALBA)

अपराजिता (CLITORIA TERNATEA)

12. चकवर (CASSIA ALATA)

कोमल पत्तो वाली फुनगी 20 ग्राम, करंज की कोमल फुनगी 20 ग्राम, अपामार्ग की पत्ती 20 ग्राम, पीपल 20 ग्राम सबको एक साथ कुट पीस कर गोली बनाकर ज्वर आने के पूर्व एक छोटे बेर के बराबर मात्रा में देनी चाहिए। उपरोक्त दवाओं का 100 गोली बना लिया जाय तथा दो गोली सुबह सायं प्रयुक्त किया जाय। विषम ज्वर पर अति उपयोगी है। काली जाति के धतुरे का जड़ 5 ग्राम के लगभग रविवार को लेकर यदि गले में बांध लिया जाय तो भूत–प्रेत का डर जो सपने में आता है। खत्म हो जाता है। घर की बारी में इसके पौधों का रोपण करना चाहिए।

व्यापारिक स्तर पर इसकी खेती तब लाभदायक है जबकि अधिक मात्रा में इसको उपजाया जाय। इसकी क्षाराभ कई उद्योग निकालती है। जिनके यहाँ इसको बेचा जा सकता है। वैद्यक कार्यों के लिए भी सभी दुकानों पर इसे बेचा जा सकता है।

11. अपराजिता (CLITORIA TERNATEA)

यह वहुवर्षजीवी लता जाति का पौधा है। सफेद एवं नीला फुल के अनुसार इसकी दो जातियां हैं। नीले फुल में भी एक इकहरे फुल वाले होते हैं। दुसरा दोहरे फुल वाले होते हैं। इसमें लम्बी फली होती है। जिसमें बीज होते हैं। सभी अंगों का औषधि में व्यवहार होता है। वेद ने इसे देवकुशुम कहा है।

गुण प्रभाव : इसकी सफेद जाति एवं नीली जाति दोनों के गुण अलग किये गये हैं। परन्तु ऐसा देखने में आता है कि दोनों का गुण एक ही है। इसका स्वाद कटु तिक्त है। यह तीनों दोषों का शमन करती है। बुद्धिदायक है। आँख के रोगों के लिए हितकारी है। भूत–प्रेतादि की शान्ति करता है। सर्प विष का शमन करता है। यह ज्वर, पित्त के रोगों को भी दूर करता है। भ्रम उन्माद को मिटाता है। यह क्षय रोग जन्य ग्रंथियों को मिटाता है। यह कामोद्दीपक तथा पेचिस को दूर करता है। इसका बीज दस्तावर है। इसे भुंजकर चूर्ण बनाकर व्यवहार करना चाहिए। **इसकी मात्रा** एक ग्राम तक प्रतिदिन है। कंठ के सभी रोगों के लिए इसके जड़ एवं शंखपुष्पी को कुट कर 2 ग्राम चूर्ण खिलाने से गला के सभी रोग दूर हो जाते हैं। सर्प विष में भी इसके जड़ को कुंठ के साथ कुटकर पीसकर देने से विष नष्ट होता है। सफेद अपराजिता के जड़ को दुध में पीसकर खिलाने से गिरता हुआ गर्भ रुक जाता है। इसका तासीर ठंढा है।

सेवन विधि एवं मात्रा : फुल 4 से 5 प्रतिदिन सुखे फुल का चूर्ण 1 से 2 ग्राम प्रतिदिन। जड़ का चूर्ण 1 से 2 ग्राम प्रतिदिन। बीज का चूर्ण 1 ग्राम प्रतिदिन, सभी रोगों के लिए। व्यवसायिक दृष्टि से यह लाभदायी है। इसके बीज की माँग औषध निर्माण करने वाली कम्पनियाँ करती है।

12. चकवर (CASSIA ALATA)

यह सर्वत्र उपलब्ध है। झारखण्ड एवं बिहार, उत्तरप्रदेश में यह बहुतायत से मिलता है। इसके पत्ते सनाय से मिलते जुलते तथा फली भी मेथी के फली से मिलता जुलता होता है। इस पौधा को लगभग सभी लोग पहचानते हैं।

गुण प्रयोग : इसका बीज वात नाशक, खुजली, खाँसी, दम्मा, दाद और चर्म रोगों में बहुत उपयोगी है। इसकी पत्तियाँ सनाय के जैसा दस्तावर होती है। कासमर्द के जैसा खांसी श्वास में लाभदायी है। यह कुष्ठ नासक भी है। इसकी पत्तियों का काढ़ा देने से श्वास नलिका के जमे हुए कफ को निकालकर दम्मा में काफी आराम पहुँचाती है। मुँह के रास्ते एवं पैखाना के रास्ते कफ छंट जाता है। इसका सबसे अच्छा प्रयोग दाद एक्जीमा में होता हैं। इसके लिए इसकी पत्तियों को नीम के पत्तियों के साथ पिसकर छापते हैं। इसके पत्तों का रस सर्प विष में भी उपयोगी माना जाता है तथा असम के लोग इसका व्यवहार करते हैं। इसके पत्तों के काढ़े से कुल्ला करने से मुँह के छाले मिटते हैं। इसके और अडुसे के पत्तों को चुसने से सुखी खाँसी ठीक हो जाती है। इसके पत्तों के चूर्ण 2 ग्राम खाने से दस्त साफ आता है।

मात्रा : इसके बीज चूर्ण 1 से 2 ग्राम प्रतिदिन देना चाहिए। इसके पत्तों के चूर्ण 2 से 3 ग्राम प्रतिदिन देना चाहिए।

व्यवसायिक दृष्टि से इसकी खेती उपयुक्त है। इसके पत्ते सनाय के पत्तों का विकल्प है। इसके बीज की माँग चर्म रोग की दवा बनाने वाली कम्पनियाँ करती है।

13. कालीजीरी (NIGELLA SATIVA)

यह एक वर्ष जीवी पौधा है। समस्त हिन्दुस्तान में यह पाया जाता है। इनके पत्ते कटे हुए वारीक होते हैं। बरसात में इनकी मंजरीयां निकलती है। जो लम्बी होती है। मंजरियों में ही एक कली बनती है। जिसमें जीरे के समान काली जीरी निकलती है। नवीन बीज खाकी रंग का होता है। पुराना होने पर काला हो जाता है।

गुण–प्रभाव : यह तिक्त रस की होती है। तैलिय होने के कारण यह अग्नेय है। वात नाशक, कटु पौष्टिक तथा कृमि नाशक है। ज्वर को दूर करने वाली चर्म रोग नाशक मुत्रल तथा दुग्ध वर्द्धक है। यह औषधि अपने प्रभाव से लाभकारी होती है। कृमि को नष्ट करने के लिए एक ग्राम काली जीरी के साथ 2 ग्राम छोटी हर्रे भूनी हुई प्रतिदिन रात में देने से 15 दिनों में कृमि को नष्ट कर देती है। जीर्ण ज्वर पर भी इसका अच्छा उपयोग होता है। कुष्ठ, कच्छु इत्यादि में 2 ग्राम चूर्ण, खैर के छाल के काढ़ा के साथ दी जाती है। नील के रस में पीस कर मालिस करने से सभी प्रकार के चर्मरोग दूर होंगे। मधुमेह में यह उपयोगी है। यह कद्दु दाने को भी निकाल देती है। यह बवासीर की अच्छी दवा है। आधी कच्ची आधी भूनी काली जीरी 3 ग्राम प्रतिदिन सवेरे खिलाने से सभी प्रकार का बवासीर मिटता है। रांची के तरफ के मुंडा लोग इसका व्यवहार मलेरिया बुखार में करते हैं। पक्षाघात में इसको पीसकर रुग्न अंगों पर लेप करने से लाभ होता है। कालीजीरी एवं तिल 2 ग्राम प्रतिदिन सुबह देने से सभी प्रकार के बवासीर को ठीक करता है।

सावधानी : यह औषधि बहुत उग्र है। ज्यादा खाने से मेदे को हानि होती है। यह वमन एवं मरोड़ पैदा कर सकती है। यदि इसके खाने से कोई उपद्रव हो जाय तो गाय का दूध या ताजे आँवला का रस या आँवला का मुरब्बा देने से दूर हो जाता है।

मात्रा : एक से दो ग्राम प्रतिदिन गरम पानी से खाने के बाद। **व्यवसायिक दृष्टि से** इसकी खेती बहुत ही लाभदायक मानी जाती है। यह शीघ्र कार्यकारी दवा है। इसलिए इसकी बाजार में माँग रहती है। बाजार में इसकी अच्छी कीमत मिल जाती है। इसकी खेती काफी लाभदायी हो सकती है।

14. सफेद मुसली (CHLOROPHYTUM ARUNDINACEUM)

यह अति प्राचीन काल से आयुर्वेद की दिव्य औषधियों के रूप में ख्याति प्राप्त जड़ी–बुटी है। यह लगभग सम्पूर्ण भारत में मिलता है। इसका पत्ता चौड़ा, थोड़ा लम्बा होता है। इसके जड़ में कन्द बैठता है। जिसे मुसली कहते हैं। इसमें बीज भी होता है। आजकल इसकी खेती होती है।

गुण–प्रभाव : इसका जड़ काफी पौष्टिक है। इसका प्रयोग वीर्य की कमी तथा वीर्य क्षय में किया जाता है। इसके प्रयोग से मज्जा तन्तु की वृद्धि होती है। परन्तु मेद नहीं बढ़ता है। यह लगभग सभी प्रकार की कमजोरी में लाभदायक है। यह स्नायविक दुर्बलता में भी लाभदायक है। पौष्टिक पदार्थ के रूप में सामान्य लोग भी इसका सेवन करते हैं। यह संतुलित भोजन का विकल्प है। जिस रोग में प्रोटीन हाँनिकारक होता है उस रोग में इसका प्रोटीन लाभदायी तथा रोग निवारक होता है।

मात्रा : 5 से 10 ग्राम प्रतिदिन दुध या पानी से। **व्यवसायिक दृष्टि से** इसकी खेती काफी लाभप्रद है। बाजार में 400 से 1000 रुपये किलो तक यह बिक जाती है। इसकी माँग सम्पूर्ण विश्व में है।

15. काशमर्द (CASSIA OCCIDENTALIS)

इसका पौधा बरसात में बिहार, झारखण्ड तथा उत्तरी पूर्वी भारत के सभी प्रदेश में देखने को मिलता है। इसके कई भेद है। उजला, काला दो प्रकार का यह पाया जाता है। इसके पत्ते गोल बरछी के सामान उपर के तरफ मखमली तथा नीचे के बाजू कुछ खुरदरे होते हैं। इसके फुल गुच्छों में रहते हैं। इसकी काली जाति काफी लाभदायक होती है। काशमर्द को झारखण्ड के लोग बड़ा चकौड़ा कहते हैं।

गुण प्रभाव : यह अति उपयोगी दिव्य औषधियों में से एक है। इसके पत्तों का साग रुचिकारक, वीर्यवर्द्धक, खाँसी को नष्ट करने वाली होती है। विषनाशक, बवासीर तथा कंठ के रोगों के लिए उपयोगी है। यह त्रिदोष जन्य बुखार एवं पित्त के रोगों में लाभदायी है। इसका जड़ श्लीपद में लाभदायी है। इसके काली जाति के जड़ को गोलमीर्च के साथ पीस कर पिलाने से सर्प के विष को नष्ट करता है। इसका छाल, पत्ता, जड़ सभी दस्तावर है। बच्चों की कुकुर खांसी में यह अत्यधिक लाभदायी हैं। इसकी जड़ के छाल को चाय के साथ बीज के चूर्ण को शहद के साथ देने से मधुमेह में लाभ करता है। इसके बीज पत्ते और जड़ की छाल को गन्धक मिलाकर खाज–खुजली पर चुपरने से जादु के जैसा लाभ होता है।

इस वनस्पति से कॉफी भी बहुत अच्छी तैयार होती है। इसकी विधि यह है कि : कसौजी के बीज एक सेर लेकर हल्की आंच में सेक लेना चाहिए। फिर उनको पीस कर उस चूर्ण में छोटी इलायची के बीज 10 ग्राम, कंकोल 5 ग्राम, जायफल 3 ग्राम, जावित्री 3 ग्राम, सौंफ 3 ग्राम, खसखस 3 ग्राम सबका चूर्ण मिला देना चाहिए। इसको कॉफी की तरह पीने से मन में उमंग उत्पन्न होता है। आलस्य मिटती है। शक्ति भी बढ़ती है। इसके काढ़ा से स्नान आम वात को दूर करता है। इसके बीज तथा मुली के बीज को पीसकर लेप करने से सफेद कुष्ट मिटता है। इसके पत्तों का काढ़ा हिचकी में लाभदायी है। मीर्गी में इसके सुखे फलों को पीसकर नास लेने यानी सुंघने से मीर्गी में बहुत लाभ होता है।

मात्रा : जड़ के छाल का चूर्ण 3 से 5 ग्राम या पत्ता 2 से 3 ग्राम एवं फल का चूर्ण 1 से 2 ग्राम उपयोग करना चाहिए। **व्यवसायिक दृष्टि से** इसकी खेती काफी उपयोगी है। इसके बीज की माँग बहुत अधिक रहता है। क्षेत्रीय स्तर पर भी इसके पौधों की मांग होती है। इसके पौधे जहाँ पर रहते हैं। वहाँ पर विषैला सर्प नहीं आता। भूत–प्रेत से भी मुक्ति मिलती है। अतः इसकी खेती व्यापारिक दृष्टि से लाभदायी है। इसका बाजार व्यापक हो सकता है।

16. सीज (EUPHORBIA NERIIFOLIA)

सम्पूर्ण भारत में मिलने वाली इस पौधा को मुठिया सीज के नाम से भी जाना जाता है। इसका पौधा 10 से 15 फिट तक ऊंचा होता है। इसकी डालियां लम्बे–लम्बे डंडों के रूप में रहती है। जिन पर बड़े तीक्ष्ण कांटे होते हैं। पत्ते, डाल तोड़ने पर दूध निकलता है।

गुण प्रभाव : थूहर अति उपयोगी औषधीय पौधा होते हुए इसका व्यवहार अधिक सावधानी पूर्वक किया जाता है। इसमें दस्तावर गुण अधिक है। थोड़ी सी असावधानी से अतिसार जैसा पैखाना होने लगता है। यह तिक्ष्ण, गरम औषधि है। यह अग्नि को बढ़ाता है। तीक्त रस की औषधि है। यह उदर शुल, अफारा, कफ, गुल्म, उमान्द, मुर्च्छा, कुष्ठ, बवासीर, सुजन, मेद रोग, पथरी, पाण्डु, शोक, ज्वर, प्लीहा और विष को दूर करता है। पुराने उदर रोग एवं कुष्ठ रोग में विरेचन देने के लिए एक योग है जो इस प्रकार है। लगभग 10 ग्राम काली मीर्च किसी बर्तन, शीशे या कप या प्लेट में रखकर उस गोल मीर्च को सीज के दुध से भिगावें, जब गोल मीर्च दुध में फूल जाय तो उसे धूप में सुखाकर रख लें। एक गोलकी खिलावें। यदि एक से पैखाना नहीं हो तो दूसरे दिन दो गोलकी दें। इससे अधिक नहीं दें। कुष्ठ एवं पुराने कब्ज वाले उदर रोग के लिए यह लाभदायक है। इसके दुध को चमड़े पर लगाने से छाला पड़ जाता है। पुराने आम वात एवं सन्धि शोध में इसके रस को नीम के बीजों के तेल के साथ मिलाकर मालिस किया जाता है। आक्षेपक खांसी में इसके पत्ते का रस 1/4 चम्मच से आधा चम्मच देते हैं। इसके कोमल पत्तों का साग आदिवासी तथा पहाड़ी लोग कफ के रोगों में प्रयोग करते हैं। पत्ते को गरम कर रस निकाल कर कान में यह डाला जाय तो कान का दर्द मिटता है। मांस पेशियों की सुजन पर इसके दुध लगाने से सुजन मिट जाती है।

मात्रा : इसके जड़ के चूर्ण की मात्रा 1/4 ग्राम से आधी ग्राम तक प्रतिदिन दें। रस की मात्रा 2 से 5 बूंद प्रतिदिन दें और दूध की मात्रा चौथाई बुन्द तक दे सकते हैं। पर सावधानी सहित।

व्यवसायिक दृष्टि से इस पौधा की खेती करके, इससे वनस्पतियों के कीड़े नाशक, दवा बनाने में उपयोग किया जा सकता है या पेस्टीसाइड बनाने वालों को बेचा जा सकता है। इसके दुध को सुखाकर उस चूर्ण को भी औषध या पेस्टीसाइड बनाने वालों के हाथ बेचा जा सकता है।

13. कालीजिरी (NIGELLA SATIVA)

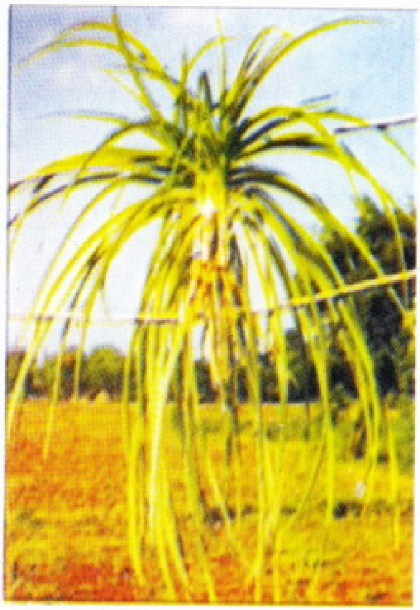

14. सफेद मुसली (CHLORO PHYTUM ARUNDINACEUM)

15. काशमर्द (कसौंजी) (CASSIA OCCIDENTALIS)

16. सीज (EUPHORBIA NERIIFOLIA)

17. ब्राह्मी (HYDROCOTYLE ASIATICA)

इसको मंडूक पर्णी भी कहते हैं। ब्राह्मी के नाम से एक और पौधा है। जिसे जल नीम कहते हैं। दोनों की आकृति आपस में मिलती नहीं है। दोनों नम स्थान पर होने वाला छोटा पौधा है। जहां पानी मिलता है वहां पर सालों यह मिलता है। इसकी पतली–पतली डालियां जमीन पर फैलती है और डालियो के प्रत्येक जोड़ मिट्टी के सम्पर्क में आकर जड़युक्त हो जाता है। प्रत्येक जड़ पर पत्ते फल फूल आते हैं। इसके पत्ते अखण्ड गोलाकार, कंगुरेदार तथा एक से डेढ़ इंच तक लम्बे होते हैं। इस वनस्पति को मसलने से तीव्र गन्ध आती है। स्वाद कड़वा और तेज होता है। औषधि में इसका पत्ता जड़ सभी काम आता है।

गुण : यह दिव्य गुणकारी औषध है। यह तिक्त कटु मधुर औषध है। यह पौष्टिक तथा धातु परिवर्तक औषध है। इसलिए यह कायाकल्प करने की क्षमता रखती है। यह भूख बढ़ाती है। कण्ठ के स्वर को तथा स्मरण शक्ति को बढ़ाती है। यह सभी तरह के चर्म रोगों का नाश करती है। पाण्डु (जौन्डीस) अनिच्छित वीर्यस्त्राव, रक्त दोष को मिटाती है। कफ, चेचक, दम्मा, उन्माद में यह लाभदायक है। यह दुध को शुद्ध करती है। ब्राह्मी बल–वर्द्धक तथा रसायन है। इस औषधि के प्रयोग से जीवनी शक्ति आश्चर्यजनक तरीके से बढ़ती है। इसलिए यह किसी अन्य रोग को होने नहीं देती। यह सभी प्रकार के मन के रोगों को मिटाने में सक्षम है। स्मरण शक्ति को मजबूत करती है। यह सर दर्द को भी मिटाती है।

व्यवहार विधि : इसको जड़ सहित या अकेले पत्तों को लेकर छाया में सुखाना चाहिए। उसके बाद इसका चूर्ण बनाकर 2 ग्राम से 5 ग्राम तक प्रतिदिन व्यवहार करने से उपर बताये गये किसी भी बीमारी को यह शान्त करता है। इसके ताजा पत्तियों का रस 2 से 4 चम्मच मधु मिलाकर खाने से भी लाभ मिलता है। 5 से 10 पत्ता प्रतिदिन चबाकर खाने से बहुत से रोगों से रक्षा करता है। **व्यवसायिक स्तर :** समस्त विश्व के लोग, इसके गुणों से परिचित है। सभी जगह यह उत्पन्न नहीं होती। अतः इसकी खेती करके अच्छी कमाई की जा सकती है। इसमें से अनेकों तत्व एवं क्षाराभ भी निकाले जाते हैं। अतः इसका बाजार है। सम्पूर्ण विश्व के लोग इसके गुण से प्रभावित है।

18. जलनीम (ब्राह्मी) (BACOPA MONNIERI)

इसकी क्षुप गीली तथा तर जमीन में पैदा होती है। सम्पूर्ण भारत में जल के आस–पास यह पाई जाती है। बंगाल के लोग इसका साग खाते हैं। संथाल परगना में इसको जेम्हा घास के रूप में जानते हैं। इसका क्षुप मंडुक पर्णी से छोटा तथा सघन होता है। पत्ते मोटे तथा पतले होते हैं। कुछ लम्बाई लिए हुए होते हैं। इसके फुल रक्त के समान लाल होता है। इसका स्वाद कड़वा होता है।

दोष और प्रभाव : यह शीतल औषधि है। कब्ज को मिटाती है। पचने में हल्की है। बुद्धिवर्द्धक है। किसी भी प्रकार के अरिष्ट का नाश करती है। रसायन गुण सम्पन्न है। स्वर को उत्तम करने वाली हैं। यह पेसाब से संबंधित सभी बिमारियों को भी मिटाती है। हृदय के रोगी को यह जीवन दान देती है। सुजन और ज्वर को भी मिटाती है। यह क्षय की भी अच्छी औषधि है। सभी कुष्ट रोगों को दूर करती है। मस्तिष्क पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ता है। मज्जा तन्तुओं को बल देकर यह शान्ति प्रदान करती है। मीर्गी और हिस्टीरिया के रोग को यह ठीक कर देती है। यह अति उत्तम स्नायु पौष्टिक है। श्वास दम्मा में इसका व्यवहार किया जाता है। पूर्णतः पागलपन की अवस्था में भी इस जड़ी का सफल व्यवहार ग्रामीण लोग करते हैं। कुछ लोग इसको सांप के काटने के बाद रोगी को पिलाते हैं और लाभ की अनुभूति भी करते हैं।

व्यवहार विधि : इस औषधि को संग्रह कर सुखाकर उसका चूर्ण बना लें। 2 से 5 ग्राम प्रतिदिन इसके सेवन से उपरोक्त सभी रोगों में लाभ होता है। इसके 10 ग्राम पौधा को कुटकर 100 ग्राम पानी में उबालें जब 25 ग्राम रह जाय तब उसे छान कर प्रतिदिन पिलाने से भी सभी रोगों में लाभ मिल जाती है।

आर्थिक दृष्टि से इसकी खेती : इस औषधि की मांग विश्व व्यापी है। इसमें से कुछ रसायन तत्व निकाले जाते हैं। आयुर्वेद होमियापैथिक तथा आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की फार्मेसी भी इससे दवा बनाते है। अतः इसकी खेती आर्थिक विकास में काफी सहायक हो सकती है।

19. चित्रक (PLUMBAGO ZEYLANICA)

यह वनस्पति सम्पूर्ण भारतवर्ष में पैदा होती है। इसकी खेती भी की जाती है। इसके पौधे वहु वर्षजीवी तथा हरे–भरे रहने वाले होते हैं। एक बार लगा देने पर इसके जड़ को छोड़कर काट लेने पर भी पुनः नया डंठल निकल जाता है। जड़ से कई पतली–पतली डालियाँ फुटती है जो चिकनी और हरे रंग की होती है। इसके फुल सफेद तथा फल में एक प्रकार का लसलसा पदार्थ हो जाता है। जो कपड़ों में सट जाता है। इसकी जड़ की छाल औषधि में काम आता है। परन्तु इसके डंठल पत्ते एवं बीज भी लाभदायी है।

गुण एवं प्रभाव : यह अग्निवर्द्धक है। पाचक अग्नि को नियमित तथा संतुलित करता है। भूख की वृद्धि करता है। अग्नि वर्द्धक होने के नाते यह चर्म रोगों की भी अच्छी दवा बन जाती है। मन्दाग्नी के साथ यदि पतला पैखाना हो तो इसके सेवन से ठीक हो जाता है। बवासीर पर इसका उपयोग किया जाता है तथा लाभप्रद है। समूचे शरीर की सुजन को मिटाने में इसका व्यवहार अन्य औषधियों के मिश्रण के रूप में होता है। शिरका मे ंपीसकर नमक मिलाकर यदि गलित कुष्ट पर छापी जाय तो लाभकारी होता है। समस्त शरीर पर लगाने के लिए इसे शिरका एवं दुध के साथ पीसकर लेप करनी चाहिए। अकेला इसका उपयोग चर्म को जला देता है। इसके एक से दो पत्ते या थोड़ा डंठल पीस कर यदि कुछ घंटों के लिए चर्म पर छाप दी जाय तो फोड़ा उत्पन्न हो जाता है। गर्भिणी को इसका व्यवहार नहीं करना चाहिए। इसका टिंक्चर आधुनिक चिकित्सक अनेकों चर्म रोगों में व्यवहृत करते हैं तथा खाने के काम में भी लेते हैं।

आर्थिक दृष्टि से इसकी खेती काफी लाभप्रद है। इसका बाजार सम्पूर्ण देश विदेश है। इससे निकलने वाले क्षाराभ का प्रयोग हृदय रोग, अमाशय रोग तथा स्नायु रोगों में होता है। इसकी खेती आर्थिक दृष्टि से लाभदायी है। एकबार लगा देने से तथा कम पानी में भी यह हो जाता है। **मात्रा एवं सेवन विधि :** चूर्ण 1 से 2 ग्राम। काढ़ा 10 से 20 ग्राम। रस आधा से एक ग्राम प्रतिदिन।

20. भारंगी (CLERODENDRUM INDICUM)

यह कुर्म पुराण द्वारा वर्णित आयुर्वेद की प्रसिद्ध औषधि है। इसके पत्ते बड़ी कनेर के पत्तों से मिलते जुलते होते हैं। फर्क यह होता है कि ये लम्बाई चौड़ाई मुटाई में बड़े होते हैं। जड़ से एक डाल 6 से 10 फीट एवं कहीं–कहीं इससे भी अधिक बढ़ते हैं तथा डाल के साथ छोटे डंठल एवं पत्तियाँ संलग्न रहती है।

गुण एवं प्रयोग : यह गठिया वात रोग एवं आम वात के लिए अति उपयोगी औषध है। इसके जड़ का काढ़ा इसके लिए उपयोगी है। इसका व्यवहार श्वास काश एवं ज्वर में भी किया जाता है। फेफड़ों की सुजन तथा विकृति में इसका व्यवहार सफलतापूर्वक होता हैं इसके पत्तों का व्यवहार आम वात में होता है।

व्यवहार विधि एवं सावधानियाँ : ऐसा माना जाता है कि भारंगी के पौधे विषज होते हैं। इसलिए इसके व्यवहार में सावधानी की आवश्यकता है।

मात्रा : चूर्ण चौथाई ग्राम प्रतिदिन से बढ़नी नहीं चाहिए तथा घी या दुध के साथ लेनी चाहिए। 2 से 5 ग्राम औषधि का काढ़ा बनाकर इसे लिया जा सकता है। अच्छा यह होगा की इसे दो बार लिया जाय। इसका विषज प्रभाव यदि महसूस हो तो इसे दुध में उबाल कर प्रयोग करना चाहिए।

व्यवसायिक स्तर पर इसका उत्पादन किया जाय तो इसकी बाजार में माँग है। इसकी खेती लाभदायी है। बहुत अधिक मात्रा में उत्पादन करने पर क्षाराभ बनाने वाले इसे खरीदेंगे। बहुत कम मात्रा मे स्थानीय बाजार में इसे बेचा जा सकता है।